(कहानी)

ऑफिसर पत्नी

तारो सिन्दिक

दिन का आखिरी मरीज़ देखने के बाद उन्होंने चाय की भी आखिरी चुस्की ले ली। अपने चेंबर की पपरी छूटी हुई और दरारे पड़ी दीवार पर टंगी वाल क्लॉक पर उन्होंने दृष्टि डाली। शाम चार बजकर पंद्रह मिनट! उसने जल्दी अपनी ज़रूरती सामानों को समेटकर बैग में डालना आरंभ किया। गाड़ी की चाबी, मोबाईल फोन, कलम, हेण्ड सेनिटाईज़र इत्यादि। सामने दरवाजे पर तैनात अस्पताल की महिला कर्मचारी मेमा ने स्नेहयुक्त उलाहना भरे स्वर में पूछा-

"आसुम मैडम, आप क्यों हमेशा इतनी जल्दी में होती हैं? आराम से जाईए ना। घर ही तो जाना है।" धीमी मुस्कान के साथ डॉ. आसुम ने उत्तर में कहा- "हाँ घर ही जाना है। घर में बहुत काम होता है। इसलिए मुझे जल्दी पहुँचना होता है।"

"क्या? घर जाकर भी आप काम करेंगी। सुबह से शाम तक मरीज़ों को देखने के बाद भी घर जाकर काम करेंगी? तो आप आराम कब करेंगी? और आज आप कुछ ज़्यादा ही जल्दी में लग रही हैं।" मेमा ने विस्मय भरे स्वर में पूछा।

मेमा के ममतामय सवालों के घेरे से वह एक ठंडी मुस्कान और केवल इतना ही कहकर बाहर निकली- "हाँ। मैं काम से छुट्टी होकर काम पर ही लौटती हूँ।"

फिर लगभग दौड़ती सी अपनी चेंबर से निकल वह गाड़ी की ओर बढ़ चली। सर्दी की शाम, सूरज मानो जल्द अस्त होने को बेताब, पहाड़ों के ओट में आधा छिप गया था। बाथ नामक कसबे की प्राईमेरी हेल्थ सेंटर की दीवारों और छतों पर सामने बाँस की परछाईयाँ धीरे-धीरे सरकती, और लंबी होती जा रही थी। आसुम ने गाड़ी स्टार्ट की और ईटानगर की ओर रुख किया। आज उनको घर थोड़ा ज़्यादा जल्दी पहुँचना था।

डॉ. आसुम के लिए ऑफिस से इस हड़बड़ाहट के साथ भागना कोई नई बात नहीं थी। वह रोज़ इस तरह भागती, जैसे उनके घर जल्दी नहीं पहुँचने से घर की दुनिया इधर से उधर हो जायेगी। उनको सबसे बड़ी चिंता सताती थी, गोधूलि के समय, गंगा मार्केट और ज़ीरो प्वाइंट में लगने वाली ट्रेफिक जाम। अजगर की तरह रेंगती गाड़ियों की कतार के बीच फँसकर वह बहुत बेबस और लाचार महसूस करती। रोज़ाना बाथ से ईटानगर की ज्योकुम लापाङ तक का सफर तय करना जैसे, उसकी नियति बन गई थी।

आज उन्हें नियति की दुगुनी मार झेलनी पड़ी। बमुश्किल बाथ और गोहपुर के बीच की ऊबर-खाबड़ सड़क पार करते हुए विवेक विहार पहुंची ही थी कि बी.जे.पी. मुख्य कार्यालय के लगभग सौ मीटर के दायरे तक जन सैलाब और बेशुमार गाड़ियों ने सड़क पर कब्ज़े जमा रखे हुए थे। उन्होंने फिर से घड़ी देखी। पाँच बजे! गाड़ी के शीशे उतार भीड़ में से एक सज्जन से इस जमावड़ा का कारण पूछा,-

"भाई साहब! यहाँ क्या चल रहा है?"

शायद वह भाजपा का कोई कार्यकर्ता था। माथे पर भगवा रंग की नेहरू टोपी, गले पर कमल फूल से लदा भगवा मफ़लर और भगवा रंग का 'गालुक' जिसके जेब और पीठ पर 'कमल' खिलखिला रहा था। पान का पीक थूकते हुए उन्होंने जन सैलाब के इकट्ठे होने का कारण बताते हुए कहा,

"मैडम, जिन नेताओं को दो हज़ार चौबीस की विधानसभा चुनाव के लिए बी.जे.पी. पार्टी टिकट नसीब हुए हैं, उन सबका आज ज़ोरो शोरों से मुख्य कार्यालय में स्वागत-सत्कार हो रहा हैं। इसलिए उन नेताओं के साथ उनके समर्थक तथा भाजपा के सभी कार्यकर्ता भी इस खुशी के अवसर में शरीक होने आए हैं। अभी सड़क खाली होने में थोड़ा वक्त लगेगा।"

कहकर वह 'बी.जी.पी. जिंदाबाद' का नारा लगाते हुए उस भीड़ में विलीन हो गया।

"मेरी तो किस्मत ही खराब है आज! इन लोगों को भी आज ही के दिन यह कार्यक्रम रखना था! अब तो आने दोञ्यी भी मुझे समय पे घर नहीं पहुँचा सकती।"

झुंझलाती हुई उन्होंने मोबाईल फोन निकाला और अपने पति को कॉल किया।

"हेल्लो!" सामने से हसबैण्ड ने उत्तर दिया। उनके 'हेल्लो' में जवाब से ज़्यादा फटकार का लहज़ा भारी था।

"कहाँ हो तुम? अब तक तो तुम्हें घर पहुँच जाना चाहिए था। आज इतनी देर कैसे हो गई? तुम्हें पता है न, दातुम और उसकी पत्नी कब से तुम्हारी राह देख रहे हैं। साढ़े पाँच बजे डॉक्टर का अप्वाइंटमेंट है। अब वे समय पर अस्पताल कैसे पहुँचेंगे?"

उन्होंने एक ही सांस में न जाने कितने ताने सुना दिए, मानो समय पर घर नहीं पहुँचकर आसुम ने कोई संगीन जुर्म कर लिया हो। मानो आसुम जान बूझकर कही ठहर गई हो। गाड़ी में ए सी चालू थी, पर न जाने क्यों आसुम को पसीने आ रहा था। विवेक विहार की सड़क पर फैले जन सैलाब की तरह आसुम का भी मन पल भर के लिए न जाने कितनी दिशाओं में विसर्जित होने लगा था। बड़ी मुश्किल से उन्होंने अपने बिखरे मन को समेटा और देरी होने का कारण बताते हुए बहुत ही संतुलित शब्दावलियों में अपने पति से कहा-

"आज के लिए तुम उन लोगों को अस्पताल ले जाओ। जैसे ही सड़क खुलेगी, मैं भी अस्पताल पहुँच.....हेल्लो.हे..हेल्लो?" सामने से फोन डिस्कनेक्ट हो गया। आसुम ने सोचा दोबारा कॉल करने का कोई मतलब नहीं है। उन्होंने फोन बैग में डाला और रुमाल निकाल कर पसीने पोंछने लगी।

अभी सड़कों से भीड़ और गाड़ियों को हटने में देर लगेगी। वह न आगे जा सकती थी न पीछे। सोचा थोड़ा सुस्ता लिया जाए क्योंकि और झुंझलाना बेकार है। उन्होंने अपनी सीट को पीछे की ओर मोड़ा और पीठ के बल लेट सी गयी। बाहर नारेबाजी अपने प्रचण्ड पर थी, गाड़ियों की चिलम-पों भी बेशुमार था। परंतु आसुम के जेहन की दीवारों में न जाने क्यों वे चार पांच वाक्यांश बार-बार उभर-उभर कर एक दूसरे से टकरा रही थीं। उनके हसबैण्ड ने बिना कुछ जाने ही इतनी खरी खोटी सुना दी। उन्हें दु:ख इस बात का ज़्यादा नहीं था कि उनके पति ने उन्हें ताने सुनाए, बल्कि इस बात की तकलीफ़ ज़्यादा थी कि उन्होंने एक बार भी पूछना ज़रूरी नहीं समझा कि 'मैं' कहाँ फंसी हूँ। आसुम ने मन ही मन अपने पति के ताने का उत्तर रच डाले, "एक बार देर हो गई तो कौन सी आफत आ पड़ी है? आप तो घर पर औंदे पड़े हैं, एक बार उन दोनों को अस्पताल लेकर जाने में कौन सी जान निकली जा रही है? तुम्हारे जितने भी रिश्ते नाते, भाई-बंधु डॉक्टरों से इलाज के लिए आते हैं, सब को अस्पताल मैं ही तो लेकर जाती हूँ। ऐसा एक भी मर्तबा नहीं हुआ कि तुमने कभी तकल्लुफ

की हो, उन्हें ले जाने के लिए। मैं ही तो हूँ जो हर बार अपना काम पूरा करके पागलों की तरह भागी चली आती हूँ, उन्हें अस्पताल लेकर जाने के लिए। कभी हीमा हॉस्पिटल, कभी रामकृष्ण मिशन हॉस्पिटल, कभी नाहरलगुन के सरकारी अस्पताल 'थ्रिम्स', कभी नीबा हॉस्पिटल तो कभी होर्मिन हॉस्पिटल। ऐसा कोई अस्पताल नहीं है, जहाँ मैं इन लोगों को लेकर नहीं गई हूँ। मैं भी दिन भर मरीजों को देखकर थक जाती हूँ, मुझे भी शाम को घर लौटकर आराम की जरूरत होती है, परंतु मैंने कभी शिकायत नहीं की। न तुमसे, न तुम्हारे लोगों से। तुम्हारी पत्नी होने का हर धर्म मैं पूरी निष्ठा और लगन के साथ निभाते आई हूँ। परंतु उसका यह सिला कि आज, ज़रा सा विलंब होने पर इतनी कड़वी बातें सुननी पड़ी मुझे।" परंतु आसुम की यह मौन प्रतिउत्तर कभी जुबान तक का रास्ता तय नहीं कर पाया। सहसा उनकी आँखों से दो बूँद आँसू छलक कर पसीनों में मिल गया।

[2]

आज से लगभग 25 वर्ष पूर्व आसुम और तोजुम शादी के बंधन में बंधे थे। तब तोजुम रिश्ते में आसुम का 'किई' लगता था। रिश्ते में माँ का भाई लगने के कारण तोजुम का आसुम के घर आना जाना रहता था। तब अबोध आसुम को क्या मालूम था कि उनके इस तरह घर आने का प्रयोजन कुछ और था। एक रोज़ आसुम की माँ अकेले घर में अपने काम में मशरूफ़ थी। अवसर का फायदा उठाकर तोजुम उनके सामने अपनी मन की बात रख दी। उन्होंने हिचकिचाते हुए कहा –

"अञ्यी! अब तक मैं भाई के रूप में आपके घर आता रहा हूँ। अब मैं आपका 'माकबु' कहलाना चाहता हूँ। मुझे आपकी बेटी आसुम से प्रेम हो गया है। मैं अपनी बाकी की जिंदगी आसुम के साथ बिताना चाहता हूँ।"

आसुम की माँ के ऊपर जैसे कोई बिजली गिरी। अपने भाई से (दूर के ही सही) उन्होंने कभी इस इरादे की अपेक्षा नहीं की थी। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में तोजुम के प्रस्ताव का उत्तर दिया-

"ये तुम क्या कह रहे हो तोजुम? आसुम की उम्र देखी है? अभी केवल दसवीं कक्षा में है। उनके सामने विवाह की बात छेड़ना भी पाप है, गुनाह है। मुझे लगता था तुम मेरे घर बड़ी बहन के प्रति प्रेम के कारण आया करते थे। यदि पहले मुझे तुम्हारी मंशा पता होता तो मैं कभी तुम्हें अपने घर कदम तक नहीं रखने देती।"

न जाने क्यूँ आसुम की माँ आवेश में आने लगी और बिना रुके वह बोलती गयी।

"देखो तोजुम! तुम मेरे भाई जरूर हो मगर कभी भी इस भ्रम में नहीं रहना कि तुम इस रिश्ते का गलत फायदा उठाओगे। मैं विधवा जरूर हूँ, आसुम के अलावा मेरी और भी कई संतान जरूर हैं, मगर मैं कमज़ोर नहीं हूँ। मैं आज भी उतनी ही सक्षम हूँ कि मैं अकेली अपने बच्चों का लालन पालन कर सकूँ। तुम्हें क्या लगा कि मैं अकेली माँ, जीवन की परेशानियों से हारकर, अपनी बेटियों को ब्याहकर, उनसे पीछा छुड़ा लूंगी। यदि तुमने तनिक भी ऐसा सोचा तो यह तुम्हारी जिंदगी की सबसे बड़ी भूल होगी। मैं दिन रात मेहनत करके अपने बच्चों को पढ़ाऊंगी-लिखाऊंगी, उन्हें इस काबिल बनाऊंगी के वे सब अपने पैरों पर खड़े हो सके और समाज में अपनी पहचान बना सकें। मेरी आसुम ने तो अभी-अभी सपनों के पंख खोले हैं। अभी उनको उड़ना है अपने आसमानों में। इसलिए मेरी बात ध्यान से सुनो तोजुम। आईंदा इस इरादे के साथ मेरे सामने आने की गलती

कभी मत करना। यदि बड़ी बहन से मिलने आना हो तो मेरे दिल और घर का दरवाजा तुम्हारे लिए हमेशा खुला रहेगा।"

उस दिन तोजुम को कुछ और कहने की हिम्मत न हुई। अपराध किए मुजरिम सा सिर झुकाए वह घर से निकल गया। आसुम की माँ सजल नेत्रों से उन्हें जाते हुए तब तक देखती रही जब तक वह नज़रों से ओझल न हो गया।

उन दिनों आसुम चर्चे में रहती थी अपने दोस्तों में, बिरादरी में और विवेकानंद केंद्र विद्यालय कुपोरिजो के अध्यापकगण में भी। पढ़ने में अव्वल, खेल-कूद में सबसे आगे, शिष्टाचार की प्रतिमूर्ति और ऐसा कोई काम न था जो उनको नहीं आता हो। हर वर्ष परीक्षा में वह टॉप करती। सी.बी.एस.ई. बोर्ड के दसवीं कक्षा की परीक्षा में भी उसने 'डिस्ट्रिक्ट टॉपर' का उज्ज्वल स्थान प्राप्त किया। धीरे-धीरे समस्त तागिन समुदाय में आसुम के गुण और प्रतिभा, ख्याति प्राप्त करते गये। बिरादरी में कुछ लोग उनसे ईर्ष्या करते कि किसी लड़की में सारा गुण कैसे समाहित हो सकता है। पढ़ती-लिखती है, नाचती-गाती है, खेलती-कूदती है, खेती-बाड़ी में भी पीछे नहीं और घर का कोई ऐसा काम नहीं जिसे वह बड़ी सफाई के साथ न कर लेती हो। दिखने में सुंदर, स्वभाव में सुशील और उस पर सादगी ने मानो उसके सौंदर्य को सातवें आसमान पर आसीन कर दिया। एक लड़की में इतने सारे गुण हों तो किसी न किसी की आँख को खटकेंगी ही।

छोटे समुदाय में किसी लड़की का सर्वगुण संपन्न होना उसकी मुसीबत का कारण भी बन जाता है। सो आसुम अपवाद कैसे रह जाती। लिहाजा, समाज में विख्यात होने के कारण लोगों ने उन्हें दो नज़रों से देखना आरंभ किया- बहू और भावी पत्नी के रूप में। आसुम की माँ के पास न जाने कितने रिश्ते आते रहे। परंतु वह बिना किसी लाग लपेट के सभी रिश्तों को ठुकराती गयी। आसुम की पढ़ाई की रास्ते में बाधक न बनने के फैसले पर वह अटल रही। आसुम भी माँ की हर उम्मीदों पर खरी उतरती हुई अपने लक्ष्य की ओर लक्ष्य भेदी तीर बन आगे बढ़ती गई। पढ़ाई-लिखाई और अन्य ज़रूरी कामों के अतिरिक्त उन्होंने अपना वक्त कभी ज़ाया नहीं किया। इसी अनुशासन, लगन और परिश्रम का ही फल था कि वह दसवीं कक्षा की परीक्षा में डिस्ट्रिक्ट टॉपर बनी। अब आगे की पढ़ाई के लिए उन्हें डिस्ट्रिक्ट से बाहर जाना था।

तोजुम को लगा एक बार आसुम डिस्ट्रिक्ट से बाहर चली गयी तो उसके भी हाथ से निकल जायेगी। अपनी बड़ी बहन से फटकार सुनने के बाद भी तोजुम आसुम को पाने की ज़िद पाल रखा था। वह स्वयं तो दोबारा नहीं गये, परंतु मध्यस्थ के रूप में न जाने कितने लोगों को आसुम की माँ के पास भेजता रहा। जब सभी अपने-अपने प्रयासों में विफल हुए तो उन्होंने अंतिम अस्त्र के रूप में जामरुक को भेजा। जामरुक आसुम के सभी मामाओं में सबसे घनिष्ठ था। आसुम की माँ भी उन्हें अपने सगे भाई के समान मानती थी। जामरुक का कहा आसुम की माँ कभी नहीं टालेगी, यह तोजुम को अच्छी तरह पता था।

नियमित रूप से जामरुक उस दिन भी आसुम के घर आया। पर इस बार उसका आना वैसे आना नहीं था। अब की बार वह दूत बनकर आया था, तोजुम का। आसुम के डिस्ट्रिक्ट टॉपर बनने की खुशी में उन्होंने रसगुल्ले के डिब्बे के साथ आसुम की माँ को बधाई देते हुए कहा-

"दीदी! आपने अपने बच्चों को क्या खाकर पैदा किया है? सब एक से बढ़कर एक है। मजाल किसी की, जो किसी एक में भी कोई ऐब निकाल सकें? लगता है स्वयं दोञ्यी-पोलो ने आपके दामन इन गुणी संतानों

से भरे हैं। आसुम का तो कहना ही क्या? समस्त तागिन समाज में उनकी जैसी प्रतिभाशाली लड़की आज की तारीख में कहीं नहीं है। मैं तो यकीन के साथ कहता हूँ कि बिटिया आसुम बहुत जल्द बड़ा मुकाम हासिल करेगी।"

आसुम की माँ बहुत संयमित महिला थी। वह बेटी की ऐसी प्रशंसा सुनने की आदी हो चुकी थी इसलिए कभी इतराती नहीं थी। समाज में ऐसी महिलाओं की कमी नहीं थी जो अपने बच्चों की छोटी-छोटी खूबियों को भी इस तरह बढ़ा-चढ़ाकर बताती हैं जैसे पूरी दुनिया में उनके जैसे और कोई है ही नहीं। आसुम की मां उन चंचल स्त्रियों में अपवाद थी। जामरुक के जुबानी अपनी बेटी के प्रति इतने सारे प्रशंसा भरे शब्दों को सुनने के बाद भी उन्होंने केवल इतना ही कहा-

"दोञ्यी-पोलो की कृपा से मुझे अच्छे संतान तो मिले हैं, पर हम ठहरे गरीब। गरीबों के अच्छे दिन ज्यादा नहीं टिकते। आसुम भी बहुत पढ़ना चाहती है, कुछ बनना चाहती है। परंतु बिन पैसों के वह कहाँ तक पढ़ पायेगी?"

धीमी मुस्कान के साथ जामरुक ने विनोदी स्वर में कहा, "क्या बात कर रही हो दीदी? तागिन समाज में कोई है ऐसा जो आपको नहीं जानता? सब जानते हैं कि आसुम जब बहुत छोटी थी तभी उनके सर से पिता का साया हट गया। फिर भी आपने अपनी विलक्षण जीजिविषा से अपने सभी बच्चों को बड़ा किया, उन्हें पिता की कमी कभी महसूस नहीं होने दी। हमारे समाज में न जाने ऐसी कितनी महिलाएं हैं जो सुहाग का सुख भोगकर भी परिवार चलाने में बिल्कुल कच्ची हैं। आप तो उन विधवाओं में भी अपवाद हैं जो पति के मरणोपरांत लाचारी की जिंदगी जीते हैं, किसी और के रहम-ओ-करम के मोहताज हो जाती हैं। आप तो इतनी सक्षम हैं कि आसुम तो क्या, बाकी सभी बच्चों को भी जितना चाहे उतना पढ़वाकर ही छोड़ेंगी।"

आसुम की माँ अच्छी तरह जानती थी कि जामरुक परिहास कर रहा है, हालांकि उसमें सच्चाई भी थी। उन्होंने भी परिहास में उत्तर दिया-

"तागिन समाज क्या कहता है, क्या सोचता है, इसका तो मुझे पता नहीं। पर ऐसा तुम जरूर सोचते हो। यह तुम्हारा बड़ी बहन के प्रति प्रेम है।" जामरुक के कुछ कहने से पहले उन्होंने बात आगे बढ़ाई- " लेकिन बेटियों का क्या? वे सब तो एक-एक करके 'ञ्येबु' चली जायेंगी। इन्हें कब तक मैं घर पर रखकर पढ़ाती रहूँगी? नियति पर कब तक मेरी ज़ोर चलेगी?"

जामरुक को जिस मौके की तलाश थी मूल मुद्दे पर आने की, उस मौके की खिड़की और दरवाजे आसुम की माँ ने स्वयं खोल दिए। जामरुक ने फिर उस मौके को हाथ से बिल्कुल नहीं जाने दिया। आसुम की माँ ने 'ञ्येबु' यानी ससुराल की बात छेड़ी, जामरुक ने उसी को आगे बढ़ाते हुए कहा-

"यह तो स्वयं दोञ्यी पोलो की बनाई रीत है। बेटियों का किसी दिन ञ्येबु जाना तो तय है। यह मृत्यु के समान ही सत्य और अटल है।"

"मुझे तो बस यही चिंता सताती रहती है कि इन अभागिन लड़कियों को किस तरह के पति मिलेंगे और इनके ससुराल भी कैसे होंगे?"

"मुझे तो पूरा यकीन है कि मेरी भांजियों को अच्छा पति और अच्छे ससुराल ही मिलेंगे।"

"अच्छा? तुम इतने यकीन के साथ कैसे कह सकते हो?"

"दीदी! दोञ्यी-पोलो सब देखता है। उसी की दया और आशीर्वाद से तो आपके सारे बच्चे इतने संस्कारी और गुणी हैं। आगे भी दोञ्यी-पोलो की दया दृष्टि इन बच्चों पर बनी रहेगी। देख लेना दीदी, मेरी बातें कैसे सच साबित होती है, देख लेना।" जामरुक ने यह बात इतनी दावे के साथ कही मानो उसने कोई भविष्य वाणी की हो।

"कल का क्या ठिकाना, किसके नसीब में क्या लिखा है। यह तो दोञ्यी पोलो ही जानता है।" आसुम की माँ ने यह वाक्य यूँ ही कहने को कह दिया। मगर जामरुक ने उसे गंभीरता से लेते हुए कहा-

"हा दीदी! हंसी मज़ाक की बात कुछ और है। मगर सच कहो तो बेटियों के नसीब में कैसा आदमी लिखा है, कोई नहीं जान सकता। मगर समय रहते यदि हम उनका सही मार्गदर्शन करें तो किसी भी वैवाहिक अनहोनी से उन्हें बचाया जा सकता है। लड़कपन में वह कहीं अंध प्रेम के भंवर में न फंस जाएं, बस इतना ही ख्याल रखा जाए तो आगे बस निश्चिंत रहने का।" एक लंबी आह भरते हुए जामरुक असली मुद्दे पर आया-

"वैसे दीदी, आपने आसुम के बारे में क्या सोचा है?"

"आसुम के बारे में?" यूँ अचानक आसुम को बीच लाये जाने पर आसुम की माँ जैसे बदहवासी से बाहर आयी, झटके से!

"आसुम के बारे में.....सोचना!...क्या सोचना?"

"देखो दीदी। कुछ दिनों बाद आसुम ईटानगर जाने वाली है। आगे की पढ़ाई वह आपसे दूर रहकर करने वाली है। वह हॉस्टल में रहेगी। उनके कई नए दोस्त बनेंगे। लड़कियां.... और लड़के भी। आपके छत्र-छाया से दूर। आपको तो पता ही है कि अरुणाचल प्रदेश की राजधानी होने की हैसियत से ईटानगर बहुत बड़ा शहर है। डापोरिजो से कई गुना बड़ा। बड़े शहर में पलने वाले लोगों की बात ही निराली होती है। आप अंदाजा ही नहीं लगा सकते कि कौन किस किस्म के आदमी हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि आसुम बहुत प्रतिभाशाली लड़की है, मगर शहरी दांव पेंच में अभी वह बहुत कच्ची है। पता नहीं कब, कौन उसको अपनी जाल में....."

"रुको...जरा रुको जामरुक! तुम क्या कहने की कोशिश कर रहे हो? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा। सीधा-सीधा बोलो ना।" बीच में ही जामरुक को टोकते हुए संशय भरे शब्दों में आसुम की माँ ने कहा।

अब की बार जामरुक ने सपाट और सरल शब्दों में अपनी बातों को जारी रखा-

"अब आपसे क्या छिपाना दीदी। मैं आज आपके पास तोजुम के लिए आसुम का हाथ मांगने आया हूँ। आपने तो इनकार से भरे शब्द बाण से उसके हृदय को छलनी कर दिया। मगर आसुम के प्रति प्रेम और उसे पाने की इच्छा तोजुम के मन मस्तिष्क में अभी भी बेशुमार है। वह तो बेचारा दीवाना बन बैठा है। मगर आप से दोबारा नज़रें मिलाने की गुस्ताखी करने से डरता भी है। इसलिए उनकी तरफ से मैं यह प्रस्ताव लेकर आया हूँ।" कहते-कहते जामरुक के दोनों हाथ अनुरोध की मुद्रा में कब जुड़ गये स्वयं उन्हें भी खबर न रही।

एकाएक आसुम की माँ को लगने लगा कि सारी दुनिया उनकी मासूम बेटी के पीछे पड़ी है। वह तो उसे खुले आसमान में उड़ने को छोड़ना चाहती थी, लेकिन यह दुनिया उसे जमीन पर ला पटकने के लिए तुली हुई है। उसके करीबी रिश्तेदार इस होड़ में सबसे आगे। पहले तोजुम और अब तोजुम के लिए जामरुक। परायों से तो वह लड़ लेती, उन्हें दुत्कार देती या मन नहीं किया तो सीधा अनसुना और अनदेखा कर लेती। परंतु

अपनों से कब तक और कहाँ तक भागा जा सकता है? जामरुक को हाथ जोड़ते देख आसुम की माँ का दिल पसीज गया। उनके दोनों हाथ थामते हुए आसुम की माँ ने कहा-

"ये तुम क्या कर रहे हो? मुझे कैसी परिस्थिति में उलझा रहे हो? मैंने तोजुम को साफ कह दिया था कि मैं आसुम पर किसी भी प्रकार का दवाब नहीं डालूंगी। अभी हम दोनों के लिए उसकी पढ़ाई से बढ़कर कुछ भी नहीं।"

"दीदी, आपने कैसे सोच लिया कि आसुम को पढ़ने से रोका जायेगा? आसुम जहाँ चाहे जितना चाहे, वह पढ़ती रहेगी। हम आपको आश्वासन देते हैं कि शादी के बाद भी आसुम अपनी इच्छानुसार पढ़ाई जारी रखेगी।" आसुम की माँ को कुछ न सूझा। वह यूँ मौन रहकर शून्य की ओर ताकती रही। जामरुक ने फिर विवाह का समाजशास्त्रीय पाठ पढ़ाकर उस नीरवता को तोड़ा-

''मसला यह है दीदी, आसुम अब बच्ची भी नहीं रही कि वह विवाह न कर सके। बेटियों को एक दिन घर से विदा होना ही है। आसुम भी सदा बेटी बनकर नहीं रहेगी। रही बात तोजुम की... वह रिश्ते में आसुम का मामा तो लगता ही है। आप तो हमसे बेहतर जानती हैं कि तागिन समाज में मामा-भांजी या मौसी-भांजे के वैवाहिक संबंध को सबसे पवित्र और शुभ माना जाता है। यदि तोजुम और आसुम एक हो जाते हैं तो दोनों परिवारों का संबंध और भी घनिष्ठ और मजबूत हो जायेगा। आपको भाई के साथ दामाद और हमें भांजी के साथ बहू मिल जायेगी। इस तरह आसुम की शादी भी हो जायेगी और वह आपके निकट भी रहेगी। तोजुम सिर्फ दामाद ही नहीं बल्कि भाई के रूप में आपके हर सुख-दु:ख में साथ रहेगा। सिर्फ तोजुम ही क्यों, उनके सभी सगे संबंधी भी जरूरत के समय, हमेशा आपके आस पास ही रहेंगे। विवाह का इससे सुन्दर लाभ और क्या हो सकता है। इसलिए हमारी नज़र में तोजुम आप और आसुम के लिए सबसे सही जान पड़ता है। और यदि आप नहीं चाहती कि अभी आसुम की शादी हो, तो कम से कम सगाई तो कर ही सकते हो। इससे ज़्यादा मेरे पास और शब्द नहीं है कहने को। आगे आप की मर्ज़ी।"

अपने मकसद और बातें पूरी करके जामरुक ने प्रस्थान किया। पीछे रह गई आसुम की माँ। मूर्तिवत! वह खामोश जरूर थी मगर दिल की जमीन और आसमान में आंधी-तूफान उमड़ता घुमड़ता रहा। जामरुक ने उसके मर्म की सबसे नाजुक स्थल पर उस तूफान का बीज बोया था।

उस रात पल भर के लिए आसुम की माँ पलकें मूंद नहीं पायी। अमावसी रात थी। अंधकार अपने प्रचंडतम रूप में संसार को आगोश में ले लिया था। समस्त डापोरिजो नगर उस स्याह रात में पूरी तरह तल्लीन सो रहा था। केवल झींगूरों का शोर कभी-कभी उस सुषुप्त रात की नीरवता पर खलल डाल रहा था। पर आसुम की माँ की आँखें न जाने उस घनघोर अंधेरों में एकटक क्या देखी जा रही थी। नींद की मजाल जो उसके इर्द गिर्द भी भटकने आ जाए। उस भयानक अँधेरे में आसुम की भोली सूरत, तोजुम की आँखों में चाहत और तड़प और कर्तव्य के लिए प्रतिबद्ध जामरुक की काया उनकी आँखों के सामने तैरती रही। वह रात भर जामरुक की कही बातों का विश्लेषण करती रही पर किसी निश्चित निष्कर्ष के बिना उनका विश्लेषण दिशाहीन भटकता रहा। इस विश्लेषण में उसका दिल दो हिस्सों में बंट गया। एक दिल सोचता, 'जामरुक ने जो भी कहा वह कतई भी गलत नहीं है। लेकिन मैं आसुम को किस मुँह से शादी या सगाई के लिए कहूंगी? वह तो बेचारी इतनी सुशील और आज्ञाकारी है कि अपने दिल पर पत्थर और ज़ुबान पर ताला रख लेगी। किसी भी सूरत में मुझे न नहीं

करेगी। तो क्या मैं अपनी फूल सी बच्ची को अभी से विवाह नामक सामाजिक और पारिवारिक बेड़ियों में जकड़ लूँ? उनकी मर्जी जाने बगैर ही इस रिश्ते के लिए हाँ कह दूँ? नहीं... नहीं! मैं इतनी निर्दयी नहीं बन सकती। मैं उसके मनोरम सपनों का कातिल नहीं बन सकती। कभी नहीं बन सकती।'

दिल के दूसरे हिस्से से उन्होंने सोचा, 'बेटी है, कब तक बच्ची बनी रहेगी? मैं लाख चाहकर भी सदा के लिए उसे अपने दामन से लगाकर नहीं रख सकती। किसी निश्चित दिन उसको पराया धन होना ही है, तो बेहतर यही न है कि उसे अपनों के साथ ही रखा जाए। मुझसे विदा होकर भी वह मेरे पास ही रहेगी। तोजुम के साथ रहेगी तो अन्य मामा-मामियों का स्नेह और आशीर्वाद भी मिलता रहेगा। और जामरुक तो साफ कहकर गया है कि उसकी पढ़ाई में बिल्कुल भी अड़चने नहीं आएंगी। उसके सपनों को रंग और आकार देने में तोजुम सहयोगी बनेगा। ऐसे रिश्ते कहाँ आया करते हैं?'

उसी कशमकश में आसुम की माँ ने रात भर कितनी करवटें बदली, उसका हिसाब सिर्फ गीली तकिया और चादर की सिलवटें ही दे सकती थी। अंतत: उसका दूसरा दिल पहले पर भारी पड़ गया-

"आसुम मान जायेगी।"

"आसुम को मानना पड़ेगा।"

[3]

समय चलता है, चलता रहेगा। समय कटु है, समय ही मृदु भी। समय चोट है तो समय ही मरहम भी। समय ही सर्वाधिक बलवान और सबसे बड़ी कमज़ोरी भी वही। मृत्यु की तरह समय ही अंतिम सत्य है। चाहे न चाहे समय के साथ चलने को मनुष्य बाध्य है। मिस से मिसेज बनने के बाद आसुम ने सात बरस का सफर तय कर लिया। इन सात बरसों में आसुम ने अपने जीवन की सबसे कठिनतम साधना की। समय की धारा कितनी भी प्रतिकूल क्यों न हो, उन्होंने अपनी साधना भंग नहीं होने दी। बदले में समय ने उन्हें अपार सफलता से नवाज़ा। आसुम ने ऑल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ़ मेडिकल साइंस, दिल्ली से एम.बी.बी.एस की पढ़ाई पूरी करके डॉक्टर की उपाधि हासिल कर ली थी। उसकी पहली पोस्टिंग भी जिला अस्पताल डापोरिजो में हुई। यानी कि अब वह अफसर बन चुकी थी। सरकारी शासन प्रणाली की शब्दावली में 'फर्स्ट क्लास गजेटड ऑफिसर'। जिस सपने को आँखों में सजाए आसुम ने सालों की नींदे और चैन स्वाहा कर दिया था, वह कामयाबी के शिखर पर जाकर साकार हुआ। समस्त तागिन समाज की नजरें आसुम पर टिकी थी, आसुम ने उन नज़रों की कसौटी भी बखूबी पार किया। कुछ जल बुनकर राख हो गए, उसकी अलग दास्तान है।

अब आसुम ऑफिसर के साथ-साथ पत्नी भी थी- ऑफिसर पत्नी। यानी उनके व्यक्तित्व के दो नये आयाम, दो नई पहचान और दो नई ज़िम्मेदारियाँ। जिम्मेदारियों के साथ आसुम का नाता सदियों से था। बचपन से ही वह अपनी ज़िम्मेदारियों को अच्छी तरह निभाती आई है। उसके ससुराल वालों को उन पर बड़ा नाज था कि उनके घर एक ऑफिसर बहू आई है। आसुम के मुख मण्डल पर एक मधुर मुस्कान खिलखिलाती रहती। किसी को वह डाँटती भी तो लगता कि वह पुचकार रही हो इसलिए मरीजों में डॉ. आसुम सबसे चहेती है। तोजुम के सभी सगे-संबंधियों एवं रिश्तेदारों के दिलों में भी आसुम ने बहुत खास जगह बनाई। आसुम और तोजुम के एक होने से दोनों परिवारों के सारे लोग खुश थे, सिवाय तोजुम की माँ की। उनकी माँ को इस बात

का मलाल था कि शादी के वक्त आसुम अपने साथ बहुत 'तासी-लाक्तअ' लेकर नहीं आई। बहू के रूप में एक नामचीन स्त्री के घर आने की खुशी में, जब लोगों ने उन्हें बधाई दी तो उन्होंने नाक-मुंह सिकोड़ते हुए कहा था-

" पढ़ी लिखी हुई तो क्या हुआ? आई तो खाली हाथ ही है न। इससे अच्छा तो वो यापर है। यदि वो मेरी बहू बनती तो न जाने अपने साथ क्या नहीं लेकर आती।" गाँव की कुछ फूहड़ महिलाएँ उनकी हाँ में हाँ मिलाई, पर एक वर्ग ऐसा भी था, जो उनके इस मंद बुद्धि पर अफसोस जताते हुए हंसी भी उड़ाया। घर आई बहू का कोई इस तरह तिरस्कार करता है क्या? बहू भी ऐसी जिनका समस्त तागिन समाज कायल है। ऐसी बातें छोटे समाज में बहुत देर तक छुपी नहीं रहती। उड़ते-उड़ते आसुम के कानों तक यह कड़वा सच पहुंच ही गया, परंतु आसुम ने इस बात का कभी बुरा नहीं माना। उनकी सास का सारा जीवन ही ऐसे परिवेश में बीता है। उनके लिए जीवन की सार्थकता इन्हीं पारिवारिक दांव-पेंच में शातिर होने में है, जिन्होंने अपने जीवन काल में अक्षर का 'अ' तक भी न पढ़ा हो, उसके लिए जीवन और जगत के प्रति कैसा दृष्टिकोण होगा? यह आसुम अच्छी तरह जानती थी। लिहाजा आसुम के मन में अपने सास के प्रति कभी कोई खलिश न रही। आसुम ने कभी किसी से शिकायत करना जाना ही नहीं। बाल्यकाल से ही जो है, जितना है उतने में संतुष्ट रहने को वह अभ्यस्त थी। इस बुनियादी जीवन दर्शन के नींव पर आसुम का कोमल कांत व्यक्तित्व निर्मित हुआ कि उन्होंने प्रतिरोध करना कभी सीखा ही नहीं। अपनी एम.बी.बी.एस. की डिग्री हासिल करने के बाद उन्होंने एक दफा तोजुम से कहा था कि वह आगे और पढ़ना चाहती है। वह केवल सामान्य मेडिकल ऑफिसर तक सीमित न रहकर 'स्पेश्लिष्ट डॉक्टर' बनना चाहती है। तोजुम ने साफ मना करते हुए कहा-

"बहुत हो गई पढ़ाई। तुमने एम.बी.बी.एस. की डिग्री हासिल कर ली। वही काफी है और वैसे भी अब हमें परिवार बढ़ाने के लिए सोचना चाहिए।"

"सिर्फ़ दो साल की ही तो बात है। दो साल तो ऐसे ही बीत जायेंगे। विगत सात साल भी कैसे बीता कुछ पता चला क्या?" उसने लगभग फरियाद की लहजे में कहा। पर तोजुम हर्गिज मानने को तैयार न था। अपनी कही हुई बातों को दोहराते हुए उसने कहा – "बोला ना कि अब हमें परिवार बढ़ाने के बारे में सोचना चाहिए। पिछले सात बरस तुम्हारा कैसे बीता मुझे नहीं पता, पर मेरे लिए एक-एक साल एक युग जैसा लगता था। मैंने बहुत इंतज़ार कर लिया, अब और नहीं। मेरे सभी मित्रगण अब दो-दो, तीन-तीन बच्चों के माँ-बाप बन गए हैं। मेरे लिए अब बच्चे टॉप प्राइयोरिटी हैं। यह तुम्हें भी समझ लेना चाहिए। हम शादी क्यों करते हैं? बच्चे के लिए ही ना? बाद में भी बच्चे करने ही है तो जल्दी कर लेने में क्या हर्ज़? ऊपर से बिरादरी के लोग। शैतानों ने जीना हराम कर रखा है। हमारे बच्चे के लिए हमसे ज़्यादा वे लोग बेताब हैं।"

आसुम और कुछ न बोली। तोजुम ने अपनी कहकर करवट बदल ली। आसुम ने भी विपरीत दिशा करवट बदल कर चुप्पी साध ली। दोनों की खामोशी रात के सन्नाटे को और सघन कर रही थी। जीवन में पहली मर्तबा आसुम ने किसी बाहरी बंधन का दवाब महसूस किया। बंधन- आगे पढ़ने की इच्छा पर। बंधन- बच्चे करने की अनिच्छा पर। दोनों के बीच सिर्फ़ चंद इंच का फासला था पर न जाने आसुम को ऐसा क्यों लग रहा था कि तोजुम उनसे मीलों दूर है?

मिस से 'मिसेज' की उपाधि प्राप्त करने के बाद आसुम सामाजिक और पारिवारिक उलझनों में यूँ उलझती गयी कि उसका पर्सनल स्पेश छोटा होता गया। कुछ समय के बाद वह भी उसके जीवन से लुप्त हो

गया। समय के साथ वह भूलती चली गयी कि उनका अपना भी कोई अरमान है जिसे पूरा करना है। जीवन का मार्ग सपाट हो, आड़े तिरछे हों, फूल खिले हो या काँटे बिछे हों: आसुम बढ़ती गयी, ढलती गयी। अरुणाचल की जनजातीय समाज में महिलाएँ कितनी भी पढ़ी लिखी क्यों न हो, कितने भी ऊंचे पद पर क्यों न बैठी हो यदि वह पारिवारिक सरोकार में शून्य हैं तो वह बहुत अधिक सम्मान का हकदार नहीं होती। समाज महिलाओं के व्यक्तित्व और चरित्र का आकलन इसी आधार पर करता है। विवाह नामक इस संस्था में महिलाएँ किसी भी कार्य क्षेत्र या पद विशेष पर क्यों न हों, उसकी स्थिति एक सामान्य स्त्री से कुछ नहीं होती। वह अपने पद और ओहदे का रोब नहीं जमा सकती। यही सभी रिश्तेदारों के अपेक्षाओं का मूल आधार है। यही स्त्रियों के महत्ता की कसौटी है और चुनौती भी। पति से लेकर सांस, ससुर, देवर, ननद.....सभी उसमें उसी एक अपेक्षित रूप को देखने की इच्छा रखते हैं। यही रिश्तों के धागे आसुम के जीवन में मकड़ जाल बुनते गए जिससे वह कभी आज़ाद नहीं हो पाई।

आसुम ने पति की प्राईयोरिटी को प्राथमिकता देते हुए उनके कुल के दीपक जलाना आरंभ किया। कभी दो तो कभी तीन बरस का फासला रखते हुए वह पंद्रह बरस में पांच बच्चों की माँ बन गई। पहले तीन बेटियाँ फिर बाकी के दो लड़के हुए। फिर गाईनॉकोलोगिस्ट ने मेडिकल जाँच से पता लगाकर कहा कि आसुम और माँ नहीं बन सकती। तोजुम और उसके माँ के तो होश ही उड़ गये। इस खबर से सबसे ज़्यादा तकलीफ तोजुम की माँ को हुई। अपनी लाल-पीली शक्ल के साथ उन्होंने बेटे पर गाज गिराते हुए कहा -

"मैं कहती थी न, इस औरत में कुछ तो ऐब है। हमारे ज़माने में दस-बारह बच्चे पैदा करने के बाद भी माएँ चुस्त दुरुस्त रहती थी। हमने कभी किसी अस्पताल या डॉक्टर के सहारे बच्चे को धरती में नहीं लाया? आजकल की पढ़ी लिखी लड़कियाँ इतनी ढीली ढाली हैं कि उनमें बच्चे जनने की हिम्मत ही नहीं। अब तुम ही बताओ तोजुम, तुम्हारे केवल दो बेटे होंगे? हमारे समाज में किसी भी परिवार का मान-सम्मान बेटों की संख्या से निर्धारित होता है। सिर्फ मान-सम्मान ही क्यों, लोग ऐसे परिवारों पर आँख उठाने से भी डरते हैं। तुम्हारे बुढ़ापे के सहारे के लिए केवल दो लाठियाँ? दोञ्यी-पोलो न करें, कल को यदि एक लाठी टूट...।"
"आने..!" तोजुम ने चिल्लाते हुए माँ को टोका।

"कैसी बातें करती है आप? डॉक्टर ने कहा कि वह और माँ नहीं बन सकती तो मैं क्या करूँ? अब दोञ्यी पोलो ने मेरे नसीब में दो ही बेटे लिखा है तो दो ही सही।" तोजुम को बहू की तरफ़दार करते देख वह अंदर ही अंदर चटपटाने लगी।

पाँच बच्चों की माँ बनने के बाद आसुम का स्त्रीत्व के सबसे पवित्र मगर सबसे व्यस्ततम आयाम से साक्षात्कार हुआ। अपने बचे-खुचे खाली समय, जिसमें वह थोड़ी बहुत किताबें पढ़ सकती थी, वह भी बच्चों के पालन-पोषण में खपा दिया। उन्हें याद ही नहीं कि पिछले पंद्रह सालों में आखिरी बार मेडिकल साईंस और दवाईयों की कोई अपडेटेड पुस्तक कब पढ़ी थी। जो आसुम किताबों की दुनिया की शहज़ादी थी, अब उन्हें फुर्सत ही नहीं एक भी अक्षर पढ़ने का। सुबह आँखे खुलने से लेकर रात को पलक मूंदने तक वह जितने कामों में लगी रहती उसका कोई हिसाब नहीं, कोई नाप नहीं। वह गृहस्थी जीवन में इतनी मग्न हो गई कि बाहरी दुनिया का ज्ञान उसके जेहन में सीमित होता गया। दिल्ली के ऑल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ़ मेडिकल साईंस से डॉक्टर की डिग्री हासिल करने वाली आसुम अब केवल 'पत्नी' बनकर रह गई थी। ऑफिसर ज़रूर थी, पर

परिवार में किसी को क्या पड़ी है उसके सरकारी पद से। वे तो इसी बात से खुश है कि उन्होंने तोजुम को पाँच संतानों का पिता बनाया, उनके बच्चों के देख-रेख की सारी ज़िम्मेदारी अपने कंधों पर ले रखी है, घर आए मेहमानों के लिए खान-पान का बहुत अच्छा ध्यान रखती है, चौका-बासन करती है, झाड़ू-पोछा लगाती है, बच्चों और पति के कपड़े धोती हैं, बाज़ार से राशन भी खुद लाती है। तोजुम के सभी रिश्तेदार आसुम के इसी मल्टी टास्किंग के प्रशंसक थे। इतना कुछ करते हुए आसुम किस तरह अपने पेशे को निभाने के जद्दोजहद में लगी हुई है, किसको खबर? पर एक स्त्री अवश्य थी, जो बहुत सूक्ष्मता के साथ आसुम की इस कायापलट ज़िदगी का निरीक्षण करती है, एकांत में आँसू बहाती है और कुछ न कर पाने की विवशता में तड़पती रहती है। वो थी आसुम की माँ! पश्चाताप की आग सीने में दबाकर जब भी वह आसुम से मिलने जाती, उनसे नज़रें नहीं मिला पाती। उन्हें ऐसा जान पड़ता मानो आसुम की आँखें चीख-चीख कर अपने विकट जीवन की जिम्मेदार उन्हें ठहरा रही हो। मानो वह मौन क्रंदन करते हुए कह रही हो-

"देखा माँ! तुम कहती थी न कि अपने से विवाह करके मैं अपनों के साथ और तुम्हारे समीप ही रहूँगी। अब देखो। मैं किन अपनों के साथ हूँ और तुम्हारे कितने समीप हूँ? तुमने मुझे रिश्तों का जो लेखा-जोखा समझाया था, उसका नग्न रूप आज तुम्हारे सामने है। मुझे बचपन से समझाया गया था कि बड़ों की बातें कभी नहीं टालनी चाहिए। अनुभव से समझाई गई बातें कभी गलत साबित नहीं होती। पर आज देखो, तुम्हारी बातें मानकर मैं जीवन के किस उहापोह में फंसी हूँ। तुम्हारे तथाकथित अपने लोग आज मेरे गले का काँटा हैं जो उगलते नहीं बनते न निगलते। फिर मैं कैसे मान लूँ कि अनुभवों से कही गई बातें मील का पत्थर हैं? शादी ब्याह के विषय में तो कतई भी नहीं। मैंने तो देखा है, अपनों के साथ रिश्तों की डोरी में बंधकर न जाने कितनी मासूम लड़कियाँ हर दिन मर-मर कर जीती हैं। आप बड़े लोग अपने संबंधों को और घनिष्ठ और मजबूत बनाने के चक्कर में आगामी पीढ़ी के जीवन के साथ कैसा खेल खेल जाते हैं, आप लोगों को अंदाजा भी नहीं। अपनी बेबुनियाद तर्क को परंपरा और रिवाज़ का नाम देकर हमारे भरोसे और उम्मीदों के साथ बस खिलवाड़ ही करते आए हो। मैंने भी भरोसे और उम्मीदों की दुनिया बसाई थी। पर देखो....मैं उस दुनिया के किस किनारे अटकी हूँ? "

आसुम की माँ तरसती आँखों के साथ अपनी बेटी से मिलने तो जाती है, पर लौटती है आहत ह्रदय और अश्रुपूरित आँखों के साथ। माँ और बेटी जब भी मिलती अपनी-अपनी व्यथा आँखों के ज़बान से बयाँ करके, दिलों के कान से सुनकर विदा होती।

आसुम का पाणिग्रहण करने के कुछ बरस बाद ही तोजुम में बहुत परिवर्तन आ गया था। ऐसा परिवर्तन जिसे किसी भी सुखद दम्पत्य जीवन के लिए अच्छा नहीं कहा जा सकता। उस परिवर्तन का कोई ठोस या सामान्य कारण की जानकारी न आसुम के पास थी न किसी और के पास। शायद स्वयं तोजुम के पास भी नहीं। वास्तव में कोई कारण भी था क्या? शायद तोजुम भी उसी तथाकथित पुरुषवादी व्यवस्था का एक प्रोडक्ट है, जिनके सोच के हिसाब से पत्नियाँ केवल पति और घर संभालने के लिए बनी हैं। आसुम जब एक सामान्य स्त्री थी, जब तोजुम के लिए प्राप्य नहीं था, तब उन्हें पाने की आग तोजुम के सीने में धधकती रहती थी। जब वही स्त्री पत्नी में तब्दील हुई, उसके सीने की आग भी बुझती गयी। वो पागलपन, वो दीवानापन अब एक शुष्क उदासीनता में परिणत हो गया। आसुम के पास पति के इस शुष्कता का प्रति उत्तर देने के लिए न ऊर्जा बचती

थी, न अवकाश होता था। जीवन के इस शुष्कता में रस का एक मात्र आधार उनके पाँच बच्चे थे। उन्हें सकुशल बढ़ते हुए देख वह सारे दर्द और गम को यूँ मुस्कुराकर पी जाती। बच्चे बड़े हुए तो उनकी पढ़ाई की चिंता माँ-बाप को सताने लगी। डापोरिजो में स्कूलों की हालात को देखते हुए दोनों ने मिलकर तय किया कि ईटानगर शिफ्ट कर लेना चाहिए। सो ईटानगर जाने के दिन भी आ गये। तोजुम का समाज में ऊँचे लोगों के साथ उठना बैठना था। ईटानगर जाने से एक शाम पहले उनके मित्र मण्डल एवं सगे संबंधी का हुजूम उनके घर एकत्रित हुआ। ईटानगर शिफ्ट होने से पहले सबको दावत पर बुलाया गया था। आसुम की माँ सबके आने से पहले आई। वह देख रही थी कि आसुम किस तरह बेतहाशा काम किये जा रही थी। स्थानीय चूल्हे के अलाव में कई मुर्गियों को जलाते हुए आसुम पसीने से पूरी तरह लथपथ हो चुकी थी। उनका हाथ बटा रही एक महिला रिश्तेदार ने उसकी चुटकी लेते हुए कहा-

"क्या भाभी आप भी न! एक डॉक्टर होकर यह सब काम कैसे कर लेती हो? आप तो बिल्कुल 'बोस्ती औरत' (ग्रामीण महीला) जैसे हाथ चलाती हो। यह मुर्गी जलाना आखिर कहाँ से सीखा?" कहकर वह बत्तीसी दिखाकर हँसने लगी। चूल्हें को घेरकर बैठी अन्य महिलाएँ भी उस ठहाके में शामिल हुई। आसुम की माँ भी पहले हँसी में शामिल हुई फिर ज़रा सी गंभीर मुख भंगिमा के साथ कहा –

"वही तो। मैंनें तो सोचा था कि मेरी बेटी ऑफिसर बनने के बाद घर की रानी बनेगी। लेकिन यह तो नौकरानी बनी बैठी है। कौन ऑफिसर अपने घर में इस तरह काम करती है। यह तो अपने पति की चड्ढी तक धोती है। जब भी घर आऊँ तो देखती हूँ बस काम ही कर रही होती है। इनकी हथेलियों को देखो, एड़ियों को देखो। कहीं से भी लगता है कि यह ऑफिसर है? जिनकी औकात इनके पैर के धूल की बराबर भी नहीं है, जो सिर्फ पति के उगाये पैसों के वृक्ष के छाँव तले आराम फरमाती रहती हैं, ऐसी महिलाएँ भी अपने घरों में मेमसाहब बन फलती फूलती रहती हैं। और एक यह है कि बस सब कुछ होकर भी निर्धन बनती फिरती है। मानो ज़रा आराम कर लो तो मर जायेगी।"

बेटी को इस तरह ताना देते सुन सारी महिलाएँ अपनी हँसी छूटने से नहीं रोक पाई। आसुम भी सभी की बातों पर हामी भरते हुए हँसती ही रही। हँसते हुए उत्तर में वह इतना ही कहती-

"घर का काम है, खुद नहीं करेंगे तो कौन करेगा?" फिर किसी ने यह कहा, किसी ने वो कहा। सब कुछ न कुछ कहती रही, पर डॉक्टर आसुम तो आसुम है। वह मुस्कुराती हुई चुप्पी ही साधती रही। उनको किसी से कोई शिकायत नहीं। वह ऐसी गंभीर बातों को भी हल्की फुल्की हंसी में उड़ा देती। उस दौरान सारा वक्त तोजुम वहाँ बैठक में मित्रों के साथ ठहाके लगाते हुए खाने-पीने में मशरूफ रहा! सुबह आसुम को भी ईटानगर के लिए निकलना है पर वह देर रात तक काम करती रही। घर आए सभी मेहमानों एवं सगे संबंधियों को खिलाया-पिलाया, उनके जूठे बर्तनों को धोया, बचे कुचे सामानों को पैक किया तब जाकर वह बिस्तर में गई।

आसुम ने जाने ऐसे कितने संजीदे मसलों पर चुप्पी साधकर अपनी इच्छाओं का गला घोंटा है। जब उसकी माँ ने सिसकियाँ लेते हुए तोजुम के साथ शादी के लिए कहा था, उसने चुप्पी साध ली। तोजुम के साथ भावी जीवन से संबंधित उसकी माँ ने जो नफा-नुकसान का विवरण प्रस्तुत किया था, उसे बेतुकी जानकर भी आसुम ने कुछ नहीं कहा। किसी भी स्थिति में आसुम अपने माँ की आँखों में आँसू नहीं देख सकती थी। इसलिए अपने बुद्धि और विवेक के सारे किवाड़ों को बंद करके उन्होंने माँ की बात मान ली। जिस दिन तोजुम

ने आसुम की आगे पढ़ने की इच्छा पर अंकुश लगाया, उस दिन भी आसुम चुप रही। चाहती तो वह भी ज़िद पर अड़ जाती। पर उन्होंने सोचा जिद पकड़ी तो बात और बिगड़ जाएगी। न जाने समाज में कैसी-कैसी बातें बनेंगी। जो लोग मेरे रिश्ते लेकर आया करते थे, मेरी माँ पर तंज कसेंगे, उसका मज़ाक उड़ाया जायेगा। घर की बात घर पर ही रहें, इसी में सबकी भलाई है। बच्चे हो जाने के बाद आसुम की चुप्पी और गहरी होती गई। तोजुम बात-बात पर अपने मित्रों और सगे संबंधियों के सामने उनका अपमान करता, मज़ाक उड़ाता कभी-कभी डाँट-फटकार भी लगाता। पर आसुम चुप रहती। वह कतई नहीं चाहती कि बच्चों को ज़रा भी यह आभास हो कि उनके माता-पिता के बीच कुछ अनबन भी है। वह हमेशा यही सोचती रही कि लोग क्या सोचेंगे। इसी 'क्या सोचेंगे' के पिंजरे में वह लाचारी की हद तक खुद को कैद करती गई।

रात बीती, सुबह हुई। आसुम और उसका परिवार सारे सामान सहित सुबह ही ईटानगर की ओर रवाना हुए। उन्हें विदा करने के लिए सगे संबंधियों का तांता लगा हुआ था। आसुम की माँ भी नम आँखों के साथ बेटी को विदा करने वहाँ मौजूद थी। उनकी शादी तो बरसों पहले हो चुकी थी पर विदाई आज हो रही थी। उन्होंने आसुम की शादी तोजुम के साथ इस भरोसे के साथ कराई थी कि वह शादी के बाद भी उनके आस-पास ही रहेगी। पर आज वह उसी ईटानगर में बसने चली है, कभी जिसके भय से उन्होंने अफरा-तफरी में आसुम की शादी तोजुम से कराई थी। आसुम की गाड़ी आड़ी तिरछी सड़क से होते हुए दोन गाँव की ओर बढ़ने लगी। वहाँ से डापोरिजो नगर भी चारो ओर पहाड़ों से घिरा विवश मगर मनोरम लग रहा था। एक मोड़ आने के बाद डापोरिजो नगर और सुबनसिरी नदी दृष्टि से ओझल हो गया। पर एक जोड़ी बूढ़ी आँखें सफर भर में आसुम के जेहन में तैरती रही।

[4]

"मैडम! मैडम!"

"ह..ह..हाँ.!"

भाजपा के किसी कार्यकर्ता ने आसुम की गाड़ी की शीशा खटखटाते हुए कहा- "मैडम सड़क खुल गई है, अब आप जा सकती हैं।" कहकर वह अन्य को भी आगे बढ़ने के लिए हाथों से इशारा किया।

अतीत के समंदर में आसुम इतनी गहरी उतर गयी थी कि कब उनकी आँख लग गयी उन्हें पता नहीं चला। उसकी निद्रा टूटी। गाड़ियाँ धीरे-धीरे सरकती हुए आगे बढ़ने लगी।

विवाह के पच्चीस बरस के बाद भी उसके व्यक्तिगत जीवन की तरक्की की गाड़ी आगे बढ़ ही नहीं पायी। विवेक विहार के इसी जाम की तरह वह भी कहीं अटक गई थी। अभी गंगा मार्केट और जीरो पॉइंट में भी इसी तरह अटकना है, यह सोचते हुए वह अनमना सा आगे बढ़ती गयी। जैसे-जैसे रामकृष्ण मिशन अस्पताल के पास पहुँची, उसकी आँखें अनायास ही सड़क की बाएँ तरफ़ किनारे पर बने प्राईवेट क्लिनिक के कतारों पर टिक गयी। आसुम जब भी यहाँ से गुज़रती तो उन्हें लगता कि इस प्राईवेट क्लिनिक में कोई जादूई आकर्षण है। वह सोचती कि इन क्लिनिक में सेवारत डॉक्टरगण 'स्पेश्लिस्ट' कहलाकर कितना गर्वित महसूस करते होंगे। फिर वह न चाहते हुए भी अपनी स्थिति की तुलना उनके साथ करने लगती। कहाँ ये स्पेश्लिस्ट डॉक्टर, जिनका अपना नाम है, रुतवा है। मरीज़ों के इलाज के लिए अत्याधुनिक उपकरण से लैस इनके क्लिनिक की बात ही कुछ और है। और कहाँ मैं, ईटानगर से 6 मील दूर स्थित एक छोटे से कस्बे का छोटा सा प्राईमेरी हेल्थ

सेंटर में उलझी हुई। पर वस्तुस्थिति को आत्मसात करना तो वह बचपन से ही सीख चुकी थी इसलिए चंद लमहों के इस मोह पाश से स्वयं को आज़ाद कर वह आगे बढ़ जाती। उन्होंने जीवन में सबसे अच्छा कुछ किया है तो वह है "आगे बढ़ जाना।"

अटक-अटक कर आसुम को आज घर पहुंचते 7 बज गए। पर जैसे ही उन्होंने घर में प्रवेश किया, वे पहले से ही रात्रि भोज का मौज उठा रहे थे। तोजुम सोफे पर बैठकर अपने फोन पर व्यस्त था। व्यस्त क्या था, वह फेसबुक पर स्क्रॉलिंग कर रहा था। वह फॉर्मल ड्रेस में था, शायद कहीं जाना हो। चेहरे पर नाराज़गी साफ-साफ बयाँ हो रही थी। खामोशी की ज़ुबा सब समझ पा रहे थे। स्थिति की गंभीरता को भाँपते हुए दातुम ने चावल का निवाला मुंह में डालते-डालते आसुम से पूछा -

"भाभी, आज तो बहुत समय लगा दी। क्या हो गया था?"

आसुम ने अपना पर्स और बाकी सामानों को डाईनिंग टेबल पर रखते हुए उत्तर दिया –

"क्या बताऊँ दातुम। आज तो मेरी किस्मत ही खराब थी। मैं तो बाथ से निकली थी साढ़े चार बजे। सोचा था पाँच बजे तक घर पहुँचकर तुम्हें अस्पताल ले जाऊंगी। पर मेरी किस्मत तो तुम्हें पता ही है।" कहकर आसुम ने हमेशा की तरह हल्की मुस्कान भरी।

"कोई बात नहीं भाभी, आज तो भईया के कारण हम लोग डॉक्टर से मिल लिए।" कहकर दातुम अपने भोजन को पूरा करने में लग गये। तोजुम अब भी कुछ न बोला। वह मोबाईल फोन पर नज़रे गड़ाए हुए था। पर बिना कुछ बोलकर भी कितना कुछ बोल रहा था वह। उनका पूरा शरीर बोल रहा था। आसुम सब समझ रही थी। तोजुम की न जाने कितनी भाषाएँ थी, पर आसुम को उसकी हर एक भाषा की, उसके लहजे की और उसके अर्थ की हर बारीकियों की अच्छी परख थी। परखते आई है। तोजुम की खामोशी को तोड़ने के वास्ते आसुम ने ही उनसे पूछा –

"ये सूट-बूट पहनकर कहाँ जा रहे हो इतनी रात?"

"हमारे एम.एल.ए. साहब ने डिनर पर बुलाया है। नाहरलगुन जाना है। तुम भी जल्दी तैयार हो जाओ। क्या अब यूँ ही पड़ी रहोगी ऐसे?" तोजुम ने लगभग डाँटते हुए कहा।

आसुम को इस तरह पॉलिटिकल पार्टी में जाना बिल्कुल नहीं सुहाता। पर उनके पास तोजुम को मना करने की कोई वजह नहीं मालूम होती। 'पसंद नहीं है' तो वजह नहीं हो सकती। सो आसुम उनके साथ साये की तरह हर सामाजिक और राजनीतिक समारोह में उपस्थित रहती। तोजुम तो रात-रात भर शराब और कबाब के मज़े लेते रहते, आसुम बगल में बैठी रहती। उनके बेमतलब के जोक्स पर हँसने में साथ देती।

तीन जगह जाम में फँसकर आसुम पूरी तह बेहाल हो चुकी थी। उनका मन कर रहा था कि अभी बिस्तर पर गिर जाऊँ। पर पति ने कहा है हाथ चलाने को। घर में मेहमान भी है, वे क्या सोचेंगे। यह सोचकर आसुम जाने को राजी हुई।

"ठीक है। पाँच मिनट दे दो। मैं चेंज करके आती हूँ।" अपने बेडरूम की ओर जाते जाते उन्होंने घर में काम करने वाली कुसुम को चाय के लिए पुकारते हुए कहा-

"कुसुम दीदी, जल्दी चाय बनाओ। पीकर अंकल के साथ निकलूंगी मैं।"

आसुम को अपने जीवन में किसी भी चीज की लत नहीं लगी। अच्छी हो या बुरी, बड़ी हो या छोटी, लत लगना किसी के लिए अच्छी बात नहीं होती। पर आसुम को चाय की लत ज़रूर लग गयी थी। दिन में कम से कम चार या पाँच बार चाय पीना उनकी आदत बन गयी थी। और स्त्रियों की तरह आसुम को साज-सज्जा में भी उतनी दिलचस्पी नहीं है। इसलिए नहाकर तैयार होने में केवल पाँच से सात मिनट ही लगा। तब तक उसकी चाय भी बनकर तैयार हो चुकी थी।

इस बार चाय कड़वी बनी थी। पर वह बिना कुछ कहे पी गई। जैसे वह चाय न होकर उसकी जिंदगी हो।

बाहर गाड़ी में बैठा तोजुम बेतहाशा हॉर्न मारे जा रहा था।

---

*(**लेखकीय परिचय :** अरुणाचल प्रदेश के सुपरिचित युवा कवि और कहानीकार तारो सिन्दिक देरा नातुङ शासकीय महाविद्यालय, ईटानगर, अरुणाचल प्रदेश के हिंदी विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं। आपको साहित्य अकादमी का 'युवा सम्मान' मिला है और आपकी प्रकाशित कृतियाँ हैं- 'अक्षरों की विनती', 'फिर आना तुम', 'तागिन लोक-साहित्य' आदि।*

मोबा: 9402963147, ई-मेल : tarosindik@gmail.com)